इकाई 13 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकला : संगीतकला और काव्यकला

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं का अन्तः संबंध

13.3 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में संगीत कला

13.4 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में काव्यकला

13.5 सारांश

13.6 शब्दावली

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप–

- सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं जैसे स्थापत्य, मूर्ति, चित्र, काव्य तथा संगीत के अन्तः सम्बन्ध से परिचित हो पायेंगे।
- सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में संगीतकला से परिचित हो पायेंगे।
- सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में काव्यकला से परिचित हो पायेंगे।
- इसमें प्रयुक्त तकनीकि शब्दावली के बारें में जान सकेगें।

13.1 प्रस्तावना

कला के अनेक पहलू तथा अनेक दिशायें है, इन विविध दिशाओं में अनेक विशेषताएँ है। इन विविधताओं में कला क्या है? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है जैसे कि हम यह पूछते है कि जीवन क्या है? कला के संदर्भ में दो प्रश्न उठते हैं–कला, कला के लिए है तथा कला जीवन के लिए है। कला और जीवन को पृथक् नहीं किया जा सकता। कला में प्रत्येक स्थान एवं काल में जीवन स्पन्दन छिपा है जिसकी प्रस्तुति में विभिन्नता हो सकती है।

इस इकाई 'सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकला : संगीतकला और काव्यकला' में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं जैसे स्थापत्य, मूर्ति, चित्र, काव्य, संगीत के अन्तः सम्बन्ध, सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में संगीत कला, सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में काव्यकला का वर्णन किया जायेगा।

13.2 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं का अन्तः संबंध

सभी कलाओं में कलाकार के हृदय में अपनी कला के प्रति एक पवित्र भावना होती है जो आध्यात्मिकता से परिपूर्ण होती है। प्रत्येक कला का उद्देश्य आत्मोन्नति, मोक्ष प्राप्ति, सामाजिक उत्कर्ष तथा लोकरंजन से जुड़ा होता है। आत्मोन्नति एवं मोक्ष प्राप्ति को कला का लक्ष्य मानने से उसका संबंध स्वतः ही मानव के उस आत्मिक एवं मानसिक बल से जुड़ जाता है यही कारण है कि कला को विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम कहा गया है।

सौन्दर्य सभी ललित कलाओं का नैसर्गिक गुण है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ललित कलाओं के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति करता रहा है। सौन्दर्य एक ईश्वरीय गुण है। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है विश्व के समस्त सौन्दर्य में मेरा ही तेज विद्यमान है। ललित कलाएँ मनुष्य की नैसर्गिक सौन्दर्याभिव्यक्ति का आधार है। समस्त कलाओं की अभिव्यक्ति का प्रेरणा स्रोत मनुष्य की सौन्दर्य प्रियता ही है। ललितकलाएँ मनुष्य की सौन्दर्य चेतना की प्रतीक है।

पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों ने कला को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया है। **'प्लेटो** के अनुसार, कला सत्य की अनुकृति है। कला में हम ईश्वर द्वारा निर्मित सृष्टि को ही सत्यापित करते हैं। **अरस्तू** ने कहा है कि कला अनुकरणीय है। कला में सामान्य प्रत्यय को रूपायित किया जाता है क्योंकि विशिष्ट की अनुकृति उचित तथा संभव नहीं है। **प्लाटिनस** ने कला को 'ऐन्द्रिय कल्पना न मानकर बौद्धिक कल्पना' कहा। **बाउमगार्टेन** ने कहा कि 'कला प्रकृति की अनुकृति है। **हीगेल** के अनुसार, कला भौतिक सत्ता को व्यक्त करने का माध्यम है। **क्रौंचे** ने कला को बाह्य प्रभाव की अभिव्यक्ति' माना। **फ्रेडरिख नीत्शे** ने कला को 'आत्माभिव्यक्ति' कहकर परिभाषित किया। फ्रायड़ ने मनोवैज्ञानिक स्तर पर कला की कल्पना का संपूर्ण क्षेत्र 'अर्धचेतन मस्तिष्क' की क्रिया माना। **कलिंगवुड** के अनुसार, 'कला जीवन की आधारशिला हैं, संपूर्ण जीवन के अनुभवों की समग्र अभिव्यक्ति है, व्यक्ति और समाज की चेतना की एक महत्वपूर्ण क्रिया है। **रस्किन** ने 'कला को ईश्वरीय कृति के प्रतिमान आह्लाद की अभिव्यक्ति' माना। **टाल्सटॉय** के अनुसार, 'अपने भावों को इस प्रकार अभिव्यक्ति करना कि प्रेक्षक में भी वही भाव उत्पन्न हो' कला है। **हर्बर्ट रीड़** ने कला को 'क्रीड़ा' माना। **लैंगर** ने कलादर्शन की दृष्टि से भावन अर्थात् प्रभाव–पक्ष को महत्व दिया है तथा प्रभाव–पक्ष के विवेचन विश्लेषण को ही सौन्दर्यशास्त्र का प्रधान विवेच्य विषय माना।

भारतीय दृष्टिकोण से साहित्य और कला का समान भाव रस–तत्व एक ही माना है। भारत में कला शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम ऋग्वेद में मिलता है 'यथा **'कला'** यथा शफ, मघ शृण स नयामति।' ब्रह्मसूत्र में कहा गया है कि **'अरूपदेव हित सुधानत्वात्'** अर्थात् जो आंतरिक भावों को कलात्मक रूप से अभिव्यंजित करे, वही कला है। **'तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।'** प्रथम शताब्दी में भरत मुनि ने कला की यथार्थवादी परिभाषा प्रस्तुत की। अभिनवगुप्त ने माना कि व्यंजना तथा ध्वनि रसानुभूति का स्वरूप तथा काव्यकला का लक्ष्य है। डॉ. श्यामसुन्दर दास के मतानुसार, जिस अभिव्यंजना में आतंरिक भावों का प्रकाशन तथा कल्पना का योग रहता है वही कला है। के.सी. पाण्डेय ने कहा कि 'कला वह मानवीय क्रिया है जिसका विशेष लक्षण गहन निरीक्षण, गणना अथवा संकलन करना, मनन–चिन्तन करना एवं स्पष्ट रूप से

प्रकट करना है।

पाश्चात्य कला दर्शन में कलाओं को दो भागों में विभाजित किया गया है–उपयोगी कला तथा ललित कला। उपयोगी कला का संबंध शिल्पकला से था जिसमें उपयोगिता तथा नैतिकता अपेक्षित है। ललित कला आवश्यक नहीं है कि उपयोगी भी हो। ललित कला भावों की अभिव्यक्ति है जबकि शिल्प कला कौशल है। भारतीय कला विभाजन में उपयोगी तथा ललित कला का विभाजन कभी नहीं रहा।

समस्त ललित कलाएँ शैली, शिल्प, प्रेषणीयता आदि के माध्यम से भिन्न हो सकती हैं, किन्तु कल्पना, बिम्ब, प्रतीक, प्रेषणीयता, विषय, विधान आदि सामान्य गुण सभी ललित कलाओं (स्थापत्य, मूर्ति, चित्र, काव्य, संगीत आदि) में समान रूप से मिलते है। कला परम्परा में संगीत, काव्य तथा चित्रकला का अन्तः संबंध दृष्टिगत होता है। सौंदर्य एक ईश्वरीय गुण है। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है–विश्व के समस्त सौन्दर्य में मेरा ही तेज विद्यमान है। ललित कलाएँ मनुष्य की नैसर्गिक सौन्दर्याभिव्यक्ति का आधार है। समस्त कलाओं की अभिव्यक्ति का प्रेरणा स्रोत मनुष्य की सौन्दर्यप्रियता ही है। ललित कलाएँ मनुष्य की सौन्दर्य चेतना की प्रतीक है।

13.3 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में संगीत कला

सभी ललित कलाओं में अभिव्यक्ति के माध्यम की सूक्ष्मता के आधार पर संगीत को श्रेष्ठ स्थान दिया गया है। संगीत कला का सौंदर्य दिव्य है जहाँ संगीत है, वहाँ ईश्वर का वास है। भारतीय संगीत का आधार नाद है, जिसे नाद ब्रह्म की संज्ञा दी गयी है। यही आदिनाद 'ऊँ' सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय परम्परा में संगीत को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता था। संगीत शास्त्रों में ब्रह्म की प्राप्ति के लिये नादोपासना का मार्ग बताया गया है तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि को ही 'नादात्मक' कहा गया है–

"न नोदन बिना गीतं न नादेन बिना स्वराः।
न नादेन बिना नृतं तस्मान्नादात्मकं जगत्।।

नादरूपोः स्मृतो ब्रह्मा नादरूपो जनार्दनः।
नादरूपा पराशक्तिर्नादरूपो महेश्वरः।।"

अर्थात् नाद से ही श्रुति तथा श्रुति से स्वर की उत्पत्ति हुई है। स्वरों के विशिष्ट–संयोजन से राग का सृजन होता है। संगीत ग्रंथों में **स्वर** के लिए कहा है कि–**'श्रुत्यंतर भावी यः स्निग्धोश्नुरणनात्मकः, स्वरो रंजयति श्रोतृचित्त स स्वर उच्चयते'** तथा **राग** के लिये **'योश्ष्यंध्वनिविशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषितः, रंज्जकों जन चित्ताना सः रागः कथितौ बुधैः'** आदि परिभाषाएँ दी गयी है। इनसे यह विदित होता है कि स्वर में स्निग्धता, अनुरणन, प्रकाशमान, स्पष्ट व रंज्जकता निहित है और इन्हीं विशेषताओं युक्त स्वरों से राग की रचना होती है। स्वर रंज्जक होने के कारण स्वतः ही आनंददायी होते हैं। ये स्वर ही राग संगीत का स्रोत हैं अतः हम कह सकते हैं कि संगीत कला की नींव है सौन्दर्यतत्व पर आधारित है। संगीत में निहित रंज्जक तत्त्व ही सौन्दर्य का प्रतीक है। राग रचना में आरोह–अवरोह के रूप में ली गयी अनेक स्वर संगतियों में 'काकु' प्रयोग के साथ मधुर ध्वनि प्रवाह, स्वरात्मक लय तथा लयात्मक स्वर आदि ही मिलकर संगीत का निर्माण करते हुए उसमें निहित सौन्दर्य

तत्व का श्रृव्य रूप में अनुभव कराते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि स्वर व लय की विशिष्ट संयोजना द्वारा ही संगीत में सौन्दर्य का जन्म होता है क्योंकि भावों की अभिव्यक्ति में अन्य कलाओं की अपेक्षा संगीत कला का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। संगीत मात्र ध्वनि के सुन्दर संयोजन द्वारा ही सभी प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति में सक्षम है। ध्वनि जब स्थिर नियमित स्पष्ट, मधुर एवं संगीतोपयोगी हो जाती है तब वह स्वर में परिणित हो जाती है। स्वर के शुद्ध तथा विकृत दोनों ही रूप संगीत में सौन्दर्याभिव्यक्ति में सहायक होते हैं। राग भारतीय संगीत की अनुपम निधि है। राग स्वर वर्ण से अलंकृत विशिष्ट स्वरावली है जो रंज्जक तथा आनंदप्रद है। राग में सौन्दर्य के अनंत रहस्य निहित है। एक राग अनेक बार सुनने पर भी सुन्दर एवं मनोहारी प्रतीत होता है। राग भारतीय संगीतज्ञों की सुविकसित, परिष्कृत, सूक्ष्म सौन्दर्यभावना का प्रतीक है। राग का स्वर वर्ण से विभूषित 'ध्वनिविशेषस्तु' अंग उसके रूप सौंदर्य से संबंधित है तो उसका 'रंज्जकत्व' तत्त्व अंतःसौन्दर्य से संबंधित है। राग के विस्तार में स्वरों के विविध लगाव, आलाप तान, वादी, संवादी, विवादी स्वरों का उचित संयोजन, कण, मुर्की, मीड, खटका, गमक आदि अलंकरणों का प्रयोग, राग भाव के अनुसार ताल का सही निर्धारण तथा उचित लयों का प्रयोग उसके सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होते है। इस प्रकार 'संगीत कला और सौन्दर्यानुभूति' में डॉ. किरन शर्मा ने कहा है कि ''लहरियों की अविरलता तथा स्वर, ताल, लय का अपूर्व संयोजन ही संगीत का सौन्दर्य आदर्श है जो सुनने वाले को विशिष्ट आनंदानुभूति कराता है, यही सौन्दर्यानुभूति है।'' कलाकार द्वारा जब किसी राग की अवतारणा की जाती है तो कलाकार, कलाकृति एवं श्रोता इन तीनों के बीच एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। गायक अथवा वादक अपनी कल्पना के सहारे रचना को सुन्दर स्वर लहरियों से संवारता है तथा विस्तारित करता जाता हैं तथा श्रोता अपनी मनः स्थिति के अनुसार उसका रसास्वादन करता जाता है। कलाकार की भावाभिव्यक्ति तथा श्रोता की भावानुभूति की इस प्रक्रिया के बीच में 'सौन्दर्य' अपना स्थान बना लेता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि कलाकार के अन्तर्मन में स्थित सौन्दर्य की कल्पना का बाह्य सौन्दर्य के साथ सामंजस्य, निर्मित कलाकृति में उस सौन्दर्य का आर्विभाव तथा श्रोता के मन में सौन्दर्य का अनुभव इन तीनों (कलाकार, कलाकृति तथा सहृदय) के समन्वित रूप में ही सौंदर्य निहित है। कलाकार अपनी कलाकृति द्वारा आनंद एवं वेदना दोनों प्रकार के भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है। कोई श्रृंगारिक अथवा शांत रस से परिपूर्ण रचना यदि श्रोता के मन को आनंदित करती है उतना ही आनंद कोई विरह गीत या करूण रस से परिपूर्ण रचना भी प्रदान कर सकती है। उचित स्वर सन्निवेश भावों के अनुसार काकु प्रयोग श्रोता के चित्त को आह्लादित करने की क्षमता तथा कल्पना का प्रयोग किसी भी रचना को हृदयग्राही बना सकता है। संगीत रचना के बाह्य तथा आंतरिक दोनों स्वरूपों को उभारना व श्रोताओं को स्वर लहरियों के सागर में विहार कराना ही यदि कलाकार का लक्ष्य हो, और वह इसमें सफल हो तभी सौंदर्यशास्त्र की दृष्टि से वह उत्कृष्ट कला कही जा सकती है। वाद्य संगीत पदविहीन होने के उपरांत भी स्वरों के सुनियोजित एवं सुन्दर संयोजन के कारण आनंदानुभूति के एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण कर देता है। श्रोतागण तन्मय होकर उस वातावरण में विशेष सौन्दर्यात्मक तत्त्वों के निहित होने के कारण उसका रसास्वादन करने को बाध्य हो जाता है। यही सौन्दर्यात्मक तत्त्व कला को 'सत्य' ब्रह्म या मोक्ष प्राप्ति की ओर ले जाते हैं। श्रोताओं की तन्मयता ही इस बात की द्योतक होती है कि उस समय श्रोता अचेतन होते भी चेतन तथा निष्क्रिय होते भी सक्रिय रहता है। श्रोताओं को आनन्द के चरमोत्कर्ष तक ले जाने वाला यही भाव सौन्दर्य के शास्त्रीय

लक्षणों से युक्त माना जा सकता है। इन लक्षणो के अन्तर्गत, सम्मात्रा (Symmetry), संगति (Harmony), संतुलन (Balance), सुव्यवस्था (Order), विविधता (Variety), औचित्य (Propriety), स्पष्टता (Clearity) सौम्यता (Simplicity) आदि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। संगीत कला में सौन्दर्य के शास्त्रीय नियमों एवं लक्षणों के पालन से, सौन्दर्य उपादानों के समुचित प्रयोग से, कलाकार की सुन्दर एवं सफल अभिव्यक्ति से अनुकूल वातावरण में, श्रोता के सहृदय एवं ग्रहणशील होने पर संगीत कलाकृति से जो विलक्षण आनंद की अनुभूति होती है वही सौन्दर्यानुभूति है। संगीत कला से प्राप्त आनंद मूलतः विशुद्ध ही होता है।

13.4 सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में काव्यकला

भारतीय काव्य परम्परा में ऋग्वेद में सौन्दर्य को 'श्री' नाम से सम्बोधित किया गया है, इसके अतिरिक्त 'श्रिय' श्रेष्ठ आदि शब्दो का भी प्रयोग मिलता है। अमरकोष में सुन्दर शब्द तथा उसके अनके पर्याय शब्द मिलते हैं।

यथा–

'सुन्दर रूचिरं चारू, सुषमं, साधु, शोभनम्।
कान्त, मनोरम्, रूच्यं मनोज्ञं, मजुं, मंजुलम,
अभीष्टेभीप्तिं, हृदय, दयितं, वल्लभं, प्रियंम्।'

इसके अतिरिक्त ललित, सुष्ठु काम्य, कमनीय, दिव्य आदि शब्दों का भी प्रयोग 'सौन्दर्य' शब्द के पर्याय के रूप में किया गया है। अंग्रेजी में सौन्दर्य का वाचक शब्द–Beauty है। Beauty का अर्थ है "Any of those attributes of form, sound, colour, execution, character, behaviour etc. which give pleasure and gratification to the senses or to the mind, a person or thing possessing this" (आकृति, रूप, ध्वनि, रंग, प्रस्तुतिकरण, चरित्र, व्यवहार आदि जो इन्द्रियों अथवा मन को आनंद तथा संतोष प्रदान करें अथवा ऐसे गुण से सम्पन्न कोई व्यक्ति अथवा वस्तु)।

ललित कलाओं में निहित सौन्दर्य का तात्त्विक विवेचन करने तथा उसके आधार पर सिद्धांतो का निरूपण करने हेतु ही 'सौन्दर्यशास्त्र' (Aesthetics) की व्युत्पत्ति हुई तथा इसे एक शास्त्र के रूप में मान्यता प्रदान की गयी। Aesthetics का शाब्दिक अर्थ है "The Science of the Beauty in art and nature" अर्थात् कला व प्रकृति के सौंदर्य का विज्ञान या शास्त्र है। इससे पहले पाश्चात्य परम्परा में सौन्दर्य का विवेचन दर्शन की एक शाखा के रूप में होता था। भारतीय सौंदर्य दर्शन मूलतः अध्यात्मिक है। सौन्दर्य शब्द की चर्चा करते हुए सत्य, शिव, सुंदरम् व सच्चिदानंद शब्द सहज ही सामने आते हैं। सत्य, शिवं, सुंदरम् व सच्चिदानन्द के गुण है इसमें सुंदरम् का स्थान सबसे आगे हैं। सुन्दरम् के अन्तर्गत ही सत्य एवं शिव का समागम है। जो सुन्दर है उसका अस्तित्व है, वहीं 'सत्य' है, सुन्दरम् में आनंद प्रदायनी क्षमता हैं, जो आनंददायी है वो स्वतः ही कल्याणकारी हैं। यही 'शिव' है। सुन्दरम् की अनुभूति ही आनंद की अनुभूति है संगीत कला जब अपने सूक्ष्म सौंदर्य से श्रोताओं को अवधानमग्न और तन्मय कर देती है तभी परम् सुन्दरम् की स्थिति आती है और परमानंद की अनुभूति होती है। प्राचीन आचार्यो के बीच भरत के नाट्यशास्त्र, राजशेखर की काव्य मीमांसा

और अभिनवगुप्त की कृतियों में प्रसंगवश ललितकलाओं के तात्त्विक अन्तःसम्बन्ध का निर्देश मिलता है। संस्कृत काव्यशास्त्र में ललितकलाओं के तात्त्विक अन्तःसम्बन्ध पर कम विचार किये जाने का प्रधान कारण यह है कि यहाँ काव्य की गणना विद्या में और कलाओं की गणना उपविद्या में की जाती थी। इस वर्ग भेद के कारण यहाँ काव्यशास्त्रीय विचारणा में कलाओं के विवेचन को उचित स्थान नहीं मिल सका। तथापि शास्त्रीय और व्यावहारिक दोनों धरातलों पर संस्कृत साहित्य में भी अन्य कलाओं के साथ काव्य के अन्तःसम्बन्ध का संकेत मिलता है। शास्त्रीय धरातल पर राजशेखर के विचार बहुत महत्वपूर्ण है। राजशेखर का मन्तव्य है कि यद्यपि काव्य या साहित्य विद्या है और कलाएँ उपविद्या हैं, तथापि काव्य और कलाओं के बीच एक अन्तः सम्बन्ध है, क्योंकि कलाओं के सन्निवेश से काव्य को जीवन मिलता है–**''शब्दार्थयोर्यथावत्सहभावेन विद्या साहित्य विद्या। उपविद्यास्तु चतुःषष्टि। ताश्च कला इति विदग्धवादः। स आजीवः काव्यस्य।'' (काव्यमीमांसा)** अतः राजशेखर ने कवि चर्चा का विवेचन करते समय कवियों को कलाओं के अनिवार्य अध्ययन का निर्देश दिया है–**''गृहीत विद्योपविद्यः काव्यक्रियायै प्रयतेत। नामधातुपारायणे, अभिधानकोशः, छन्दोविचितिः, अलंकार तन्त्रं च काव्यविद्याः। कलास्तु चतुःषष्टिरूपविद्याः।'' (काव्यमीमांसा दशम अध्याय)** इसी तरह आचार्य वामन ने भी 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति' में काव्य के उत्कर्ष के लिए अन्य कलाओं के साहाय्य का निर्देश किया है–**'कलाशास्त्रेभ्यः कलातत्वस्य संवित्। कला गीतनृत्यचित्रादिकास्तासामभिधायकानि शास्त्राणि विशाखिलादिप्रणीतानि कलाशास्त्राणि। तेभ्यः कलातत्वस्य संवित् संवेदनम्। न हि कलातत्वानुपलब्धौ कलावस्तु सम्यक् निबद्धुं शक्यमिति। (काव्यमीमांसा)** तदनन्तर व्यावहारिक या लोकप्रचलित धरातल पर संस्कृत साहित्य में अनेक ऐसी उक्तियाँ मिलती हैं, जिनसे काव्येतर कलाओं के साथ काव्य का अन्तः सम्बन्ध समर्थित होता है। भर्तृहरि की इस पंक्ति 'साहित्य संगीत कलाविहीन' से लेकर दण्डी के **'दशकुमारचरित'** के अष्टम उच्छवास की इस पंक्ति **'बुद्धिश्च निसर्गपट्वी कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु काव्यविस्तरेषु प्राप्त विस्तारा'** तक काव्य और कलाओं का यही अन्तः सम्बन्ध ध्वनित हुआ है। इसी लिए भरत ने काव्य को सभी शिल्पों और कलाओं का समवाय सिद्ध करते हुए यह घोषणा की है–**'न तज्ज्ञानं न सा विद्या न तच्छिल्पं न सा कला। जायते यन्न काव्यांगम्।** इस प्रकार विविध भावों से परे इसी सर्वोत्कृष्ट सौन्दर्यानुभूति की परमानंद अवस्था को ही, आचार्य अभिनवगुप्त ने रसानुभूति का 'चरम तल' तथा आचार्य विश्वनाथ ने 'ब्रहमानंद सहोदर' कहा है। भारतीय परम्परा में 'रस' को सौन्दर्य का पर्याय माना गया है। रस का सम्बन्ध आनंद से है, ललित कलाओं की विशेषता है आनंद प्रदान करना। कला द्वारा निर्मित रस प्रकृति द्वारा उत्पन्न पदार्थों के रस से भिन्न है। भारतीय सौन्दर्यशास्त्र के अर्न्तगत क्षेमेन्द्र के औचित्य सिद्धांत को विशेष महत्वपूर्ण मान सकते है, क्योंकि यह औचित्य ही सिद्धांत काव्य की तरह अन्य ललित कलाओं पर भी सामान्य रूप से लागू होता है। इस दृष्टि से क्षेमेन्द्र की 'औचित्यविचारचर्चा' विचारणीय है। क्षेमेन्द्र के अलावा अन्य विचारकों ने भी औचित्य के रूप और प्रकार का विश्लेषण है–विषयौचित्य, वाच्यौचित्य, देशौचित्य, समयौचित्य, वक्तृविषयौचित्य एवं अथौचित्य। आशय यह है कि रस सिद्धांत से भी बढ़कर औचित्य विचार ही भारतीय सौन्दर्यशास्त्र का वह आधार रूप है, जो सभी ललितकलाओं पर समान रूप से लागू हो सकता है। सचमुच औचित्य की भावना रस, ध्वनि इत्यादि सभी काव्य तत्वों की मूल भावना है। क्षेमेन्द्र ने इस तत्व का 'औचित्यविचारचर्चा' में सूक्ष्म निरूपण किया है। उन्होंने बार–बार इसे कहना चाहा है कि औचित्य ही रस का प्राण है–

'औचित्यस्य चमत्कारकारिणश्चारु चर्वणे।
रसजीवितभूतस्य विचारं कुरुतेऽधुना।।'

अतः भारतीय आलोचनाशास्त्र के तीन प्रमुख सिद्धांतों रससिद्धांत ध्वनिसिद्धांत और औचित्य सिद्धांत में अन्तिम सिद्धांत ही वह व्यापकतम सिद्धांत है, जो सभी ललितकलाओं के लिए एक सर्वमान्य निष्कर्ष प्रस्तुत कर सकता है। इस प्रकार भारतीय परम्परा में सौन्दर्यानुभूति ही रसानुभूति है। अभिव्यक्ति के स्तर पर सौन्दर्य तथा अनुभूति के स्तर पर आनंद है। रस, श्रृंगार, हास्य, करूण, शोक आदि ही नहीं बल्कि भयानक रौद्र, अद्‌भुत, वीभत्स आदि रसों से युक्त आदि मानसिक विचारों को भी 'भय' के घेरे से दूर रहकर उनका रसास्वादन सौंदर्यात्मक रूप में कराता है। जैसे संगीत कला में 'करूण भाव' के प्रस्तुतीकरण में कलाकार स्वयं पीड़ित नहीं हो उठता बल्कि विभिन्न अलकांर एवं संगीत के घटकों, काकु–प्रयोगों द्वारा आलाप आदि को इस प्रकार भावों से ओतप्रोत कर देता है कि सहृदय श्रोताओं को भी कलाकार की मानसिक स्थिति के साथ तादात्म्य होने के कारण उन्हें भी एक समान भावानुभूति होती है। तादात्म्य होने की यही अवस्था 'रसानुभूति' अथवा 'सौन्दर्यानुभूति' है। सभी प्रकार के विचारों और उनके लिए निमित्त रसों का आस्वादन कराने की क्षमता एक कुशल कलाकार में होती है। उसका कारण यह है कि कलाकार सहनशील व सहृदय होने के कारण प्रत्येक वस्तु व्यक्ति या कथन की गहराई तक पहुँचने का प्रयास करता है। स्वार्थपरता से दूर रहकर आत्मा का ब्रह्मा की सिद्धि में एवं वास्तविकता में विश्वास रखते हुए, बहिरंग के साथ अतंरंग को भी जाँचता परखता है तथा बिना किसी की परवाह किए निसंकोच मुक्त रूप से भावाभिव्यक्ति करता है और इस प्रकार हर तरह से मानसिक विचारों भावों व रसों का अनुभव कलात्मक एवं सौन्दर्यात्मक रूप में स्वयं भी करता है व दूसरों को भी कराता है। सौन्दर्य की उपलब्धि अंतः और बाह्य दोनों ही कारणों से मानी जा सकती है। यह आवश्यक नहीं है कि कोई सुदंर वस्तु सभी को सुन्दर प्रतीत हो। सौन्दर्य अनुभवनिष्ठ भी हो सकता है। कमल अथवा गुलाब का फूल, नदी का कल–कल कर बहना, झरने का गिरना सभी को सुंदर लग सकता है किन्तु मानवीय भावनाओं के आधार पर देखा जाए तो प्रत्येक व्यक्ति को अपना आराध्य देवी देवता, प्रत्येक माँ को अपना बालक एवं प्रियजन रूपवान अथवा कुरूप होने पर भी सुन्दर प्रतीत होता है क्योंकि यहाँ प्रेम ही प्रधान भाव बनकर सौन्दर्य का अनुभव करा देता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सौन्दर्य केवल वस्तु का गुण नहीं है बल्कि मानसिक प्रतीति भी है। विद्वानों ने सौंदर्य का संबंध रस के साथ जोड़ते हुए उसे आनंद का मूलभूत तत्त्व बताया है। रस निष्पत्ति के लिए संवेगात्मक प्रभाव उत्पन्न करने में काव्य की प्रमुख भूमिका रहती है। सौन्दर्यानुभूति के निर्माण में माधुर्य ओज एवं प्रसाद इन तीन गुणों का समावेश रहता है। माधुर्य–मिठास, कोमलता एवं प्रेम की भावना से हृदय को कोमल एवं द्रवित करने वाला है। ओज में वीरता व शूरता की भावना भरने वाला तथा प्रसाद–मोहक स्पष्ट, सरल व शाँतचित्त की भावना को व्यक्त करने वाला है। इनके अन्तर्गत ही काव्य के माध्यम से सूक्ष्म या स्थूल रूप में अभिव्यक्ति की अनेक सुंदर धाराएँ प्रवाहित होती हैं। ललित कलाओं को सौन्दर्य का साक्षात् स्वरूप कहा गया है। ये आनन्दात्मक होने के कारण ऐन्द्रिय सुख के साथ मानसिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक सुख भी प्रदान करती है। ललित कलाओं की अभिव्यक्ति से जो रस उत्पन्न होता है उसे कलात्मक अनुभूति कहा गया है। कलात्मक रचना द्वारा रस की प्राप्ति मानवीय सृष्टि एवं प्रयत्नों का फल है।

इस प्रकार भारतवर्ष में विचारकों का एक वर्ग सौन्दर्यशास्त्र को काव्यशास्त्र, अलंकारशास्त्र, साहित्यशास्त्र या साहित्य विद्या का पर्याय मानता है। किन्तु काव्यशास्त्र केवल काव्य का शास्त्र है और उसके अध्ययन की सीमा केवल काव्य तक सीमित है जबकि सौन्दर्यशास्त्र सभी ललितकलाओं का शास्त्र है और उसकी सीमा काव्य के साथ सभी काव्येतर कलाओं स्थापत्य, मूर्ति, चित्र और संगीत तक फैली हुई है। इसलिए सौन्दर्यशास्त्र मात्र काव्यशास्त्र नहीं बल्कि कलाशास्त्र है।

बोध प्रश्न–1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें।

i) ऋग्वेद में सौन्दर्य को किस नाम से पुकारा गया है। (श्री/ईष्या)

ii) 'ऐस्थेटिक' शब्द किस भाषा से लिया गया है। (यूनानी/रोमन)

iii) 'ऐस्थेटिक' शब्द किस शब्द से बना है। (Atoantikos/रोमन)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) 'ऐस्थेसिस' का..... अर्थ है। ('ऐन्द्रिय सुख की चेतना'/ईश्वरीय सुख की चेतना)

ii) सौन्दर्यशास्त्र में .....सौन्दर्य पर विचार किया जाता है। (तीन प्रकार के/चार प्रकार के)

iii) क्षेमेन्द्र के अनुसार औचित्य ही .....प्राण है। (रस का/अलंकार का)

बोध प्रश्न–2

1. सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं का अन्तः संबंध पर विचार कीजिए।

.....

.....

2. सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में संगीत कला पर विचार कीजिए।

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं में काव्यकला पर विस्तृत विचार कीजिए।

13.5 सारांश

ललित कलाएँ सौन्दर्याभिव्यक्ति का वो माध्यम है जो अलौकिक आनंद प्रदान करती है। कला रूप की सर्जना करती है। अरूप को रूप देती है। अव्यक्त को व्यक्त करती है। जन–साधारण कला को मनोविनोद का साधन मानते हैं अर्थात् मन को आनंद देने वाला। यद्यपि मनोविनोद भी साधारण बात नहीं है, तथापि कला एवं मनोनिर्माण मन का निर्माण भी करता है। सृजन ही कला का सार है और सृजन ही सर्वस्व है। नूतन चेतना का आविर्भाव, नये आयाम और स्फूर्ति का उदय है। कला व्यापक है केवल चित्र

संगीत व मूर्ति कला ही कला नहीं है। स्वर–शब्द, रंग–रेखा, आकार–आयाम, सज्जा–अलंकार आदि सभी में अपनी समूची रूप–संपदा व रूप–विधान को लेकर कला प्रकट होती है। अंतर केवल माध्यम का हैं। इस इकाई में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के रूप में ललितकलाओं जैसे स्थापत्य, मूर्ति, चित्र, काव्य, संगीत के अन्तः सम्बन्ध का वर्णन किया गया।

13.6 शब्दावली

सौन्दर्य – शोभा

अलंकार – सौन्दर्य

ऐस्थेटिक्स – सौन्दर्यशास्त्र

सर्जना – निर्माण करना

अलौकिक – ईश्वरीय

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- अभिनवभारती के तीन अध्याय, अभिनवगुप्त, सम्पा. नगेन्द्र, हिन्दी विभाग दि.वि. दिल्ली प्र.स. 1960
- औचित्यविचारचर्चा, क्षेमेन्द्र व्याख्या. व्रजमोहन झा, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1982
- काव्यप्रकाश मम्मट, सम्पा. एवं व्याख्या, विश्वेश्वर सिद्धान्त शिरोमणि, ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी
- काव्यादर्श, दण्डी, सम्पा. एवं व्याख्या. डा. क्षेमेन्द्रकुमार गुप्त, मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, दिल्ली,1973
- काव्यालंकार भामह, सम्पा. एवं व्याख्या देवेन्द्रनाथ शर्मा, बिहार राष्ट्र भाषा–परिषद् पटना, 1985
- काव्यालंकारसूत्रवृत्ति, वामन, सम्पा. एवं व्याख्या. डा. वेचन झा, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी,
- काव्यानुशासन, हेमचन्द्र, सम्पा. एवं व्याख्या डा. रामानन्द शर्मा, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 2000
- ध्वन्यालोक, आनन्दवर्धन, विश्वेश्वरकविचन्द्र सिद्धान्त शिरोमणि, ज्ञानमण्डल लि. वाराणसी, 1998
- नाट्यशास्त्र, भरतमुनि, बटुकनाथ शर्मा एवं बलदेव उपाध्याय, चौ.सं.संस्थान, वाराणसी, 1980
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् एक अध्ययन , काशीनाथ द्विवेदी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
- रसगंगाधर, पण्डितराज जगन्नाथ, सम्पा. एवं व्याख्या पं. बद्रीनाथ झा और पं. मदन मोहन झा चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2001
- ध्वन्यालोक लोचन अभिनवगुप्त, ध्वन्यालोक की टीका, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई 1911

- वक्रोक्तिजीवितम्, कुन्तक, राधेश्याम मिश्र, चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी, 2007
- व्यक्तिविवेक, महिमभट्ट, रेवाप्रसाद द्विवेदी, चौखम्बा संस्कृत संस्थान वाराणसी, 1987
- सरस्वतीकण्ठाभरण, भोज, कामेश्वर नाथ मिश्र, चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी 1979
- साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, व्याख्याकार डा. सत्यव्रत सिंह, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 1976
- भारतीय साहित्यशास्त्र भाग 1, 2 बलदेव उपाध्याय, भा. व. उ. प्रसाद परिषद् काशी वि. सं. 2007
- भारतीय सौन्दर्यदर्शन, ब्रजमोहन चतुर्वेदी, मध्यप्रदेश संस्कृत अकादमी, मध्यप्रदेश, 1998
- संस्कृत वाङ्मय का बृहद् इतिहास, बलदेव उपाध्याय, अष्टम खण्ड काव्यशास्त्र, उ.प्र.सं.सं,लखनऊ,
- कालिदास ग्रन्थावली, सीताराम चतुर्वेदी, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़, 1960
- अभिज्ञान शाकुन्तलम्, कपिलदेव द्विवेदी, साहित्य संस्थान इलाहाबाद

ENGLISH REFERENCE

1) B.M.Chatturvedi, **Some unexplored Aspects of the Rasa Theory,**vidyanidhi Prakashan, ed.1906
2) S.K De, **History of Sanskrit Poetics.**.,Firma KLM PVT Ltd. Calcutta,1976.
3) Raniero Gnoli, **The Aesthetic experience according to Abhinavagupta;** chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi, 1968
4) P.V Kane, **History of Sanskrit Poetics**,MLBD,Delhi,f.ed. 1961
5) A.B Keith, **History of Sanskrit literature**, oxford, 1928
6) V.Raghvan, **The Number of Rasas,** University of Madras, 1949, Adyar Library Adyar,1940
7) V.Raghvan,**Some Concepts of Alankar Shastras**, Adyar Library, Adyar, 1942

13.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

क. (i) श्री (ii) यूनानी (iii)Atoantikos

ख. (i) 'ऐन्द्रिय सुख की चेतना' (ii) तीन प्रकार के (iii)रस का

बोध प्रश्न–2

1. सभी कलाओं में कलाकार के हृदय में अपनी कला के प्रति एक पवित्र भावना होती है जो आध्यात्मिकता से परिपूर्ण होती है। प्रत्येक कला का उद्देश्य आत्मोन्नति, मोक्ष प्राप्ति, सामाजिक उत्कर्ष तथा लोकरंजन से जुड़ा होता है। आत्मोन्नति एवं मोक्ष प्राप्ति को कला का लक्ष्य मानने से उसका संबंध स्वतः ही मानव के उस आत्मिक एवं मानसिक बल से जुड़ जाता है यही कारण है कि कला को विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम कहा गया है।

   सौन्दर्य सभी ललित कलाओं का नैसर्गिक गुण है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ललित कलाओं के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति करता रहा है। सौन्दर्य एक ईश्वरीय गुण है। भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है ''विश्व के समस्त सौन्दर्य में मेरा ही तेज विद्यमान है।'' ललित कलाएँ मनुष्य की नैसर्गिक सौन्दर्याभिव्यक्ति का आधार है। समस्त कलाओं की अभिव्यक्ति का प्रेरणा स्रोत मनुष्य की सौन्दर्य प्रियता ही है। ललितकलाएँ मनुष्य की सौन्दर्य चेतना की प्रतीक है।

   पाश्चात्य तथा भारतीय विद्वानों ने कला को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया है। **'प्लेटो** के अनुसार, कला सत्य की अनुकृति है। कला में हम ईश्वर द्वारा निर्मित सृष्टि को ही सत्यापित करते हैं। **अरस्तू** ने कहा है कि ''कला अनुकरणीय है।'' कला में सामान्य प्रत्यय को रूपायित किया जाता है क्योंकि विशिष्ट की अनुकृति उचित तथा संभव नहीं है। **प्लाटिनस** ने कला को 'ऐन्द्रिय कल्पना न मानकर बौद्धिक कल्पना' कहा। **बाउमगार्टेन** ने कहा कि 'कला प्रकृति की अनुकृति' है। **हीगेल** के अनुसार, कला भौतिक सत्ता को व्यक्त करने का माध्यम है।' **क्रौंचे** ने 'कला को बाह्य प्रभाव की अभिव्यक्ति' माना। **फ्रेडरिख नीत्शे** ने कला को 'आत्माभिव्यक्ति' कहकर परिभाषित किया। फ्रायड़ ने मनोवैज्ञानिक स्तर पर कला की कल्पना का संपूर्ण क्षेत्र 'अर्धचेतन मस्तिष्क' की क्रिया माना। **कलिंगवुड** के अनुसार, 'कला जीवन की आधारशिला हैं, संपूर्ण जीवन के अनुभवों की समग्र अभिव्यक्ति है, व्यक्ति और समाज की चेतना की एक महत्वपूर्ण क्रिया है। **रस्किन** ने 'कला को ईश्वरीय कृति के प्रति मान आह्लाद की अभिव्यक्ति माना। **टाल्सटॉय** के अनुसार, 'अपने भावों को इस प्रकार अभिव्यक्ति करना कि प्रेक्षक में भी वही भाव उत्पन्न हो कला है।' **हर्बर्ट रीड़** ने कला को क्रीड़ा माना। **लैंगर** ने कलादर्शन की दृष्टि से भावन अर्थात् प्रभाव–पक्ष को महत्व दिया है तथा प्रभाव–पक्ष के विवेचन विश्लेषण को ही सौन्दर्यशास्त्र का प्रधान विवेच्य विषय माना।

2. सभी ललित कलाओं में अभिव्यक्ति के माध्यम की सूक्ष्मता के आधार पर संगीत को श्रेष्ठ स्थान दिया गया है। संगीत कला का सौंदर्य दिव्य है जहाँ संगीत है, वहाँ ईश्वर का वास है। भारतीय संगीत का आधार नाद है, जिसे नाद ब्रह्म की संज्ञा दी गयी है। यही आदिनाद 'ऊँ' सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय परम्परा में संगीत को मोक्ष प्राप्ति का साधन माना जाता था। संगीत शास्त्रों में ब्रह्मा की प्राप्ति के लिये नादोपासना का मार्ग बताया गया है तथा इस सम्पूर्ण सृष्टि को ही 'नादात्मक' कहा गया है–

   ''न नोदन बिना गीतं न नादेन बिना स्वराः।
   न नादेन बिना नृतं तस्मान्नादात्मकं जगत्।।

नादरूपोः स्मृतो ब्रह्मा नादरूपो जनार्दनः।
नादरूपा पराशक्तिर्नादरूपो महेश्वरः।।''

अर्थात् नाद से ही श्रुति तथा श्रुति से स्वर की उत्पत्ति हुई है। स्वरों के विशिष्ट–संयोजन से राग का सृजन होता है। सगीत ग्रंथों में **स्वर** के लिए कहा है कि–**'श्रुत्यंतर भावी यः स्निग्धोश्ष्नुरणनात्मकः, स्वरो रंजयति श्रोतृचित्त स स्वर उच्चयते'** तथा **राग** के लिये **'योश्ष्यंध्वनिविशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषितः, रंज्जकों जन चित्ताना सः रागः कथितौ बुधैः**' आदि परिभाषाएँ दी गयी है। इनसे यह विदित होता है कि स्वर में स्निग्धता, अनुरणन, प्रकाशमान, स्पष्ट व रंज्जकता निहित है और इन्हीं विशेषताओं युक्त स्वरों से राग की रचना होती है। स्वर रंज्जक होने के कारण स्वतः ही आनंददायी होते हैं। ये स्वर ही राग संगीत का स्रोत हैं अतः हम कह सकते हैं कि संगीत कला की नींव है सौन्दर्यतत्व पर आधारित है। संगीत में निहित रंज्जक तत्त्व ही सौन्दर्य का प्रतीक है। राग रचना में आरोह–अवरोह के रूप में ली गयी अनेक स्वर संगतियों में 'काकु' प्रयोग के साथ मधुर ध्वनि प्रवाह, स्वरात्मक लय तथा लयात्मक स्वर आदि ही मिलकर संगीत का निर्माण करते हुए उसमें निहित सौन्दर्य तत्व का श्रृव्य रूप में अनुभव कराते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि स्वर व लय की विशिष्ट संयोजना द्वारा ही संगीत में सौन्दर्य का जन्म होता है क्योंकि भावों की अभिव्यक्ति में अन्य कलाओं की अपेक्षा संगीत कला का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। संगीत मात्र ध्वनि के सुन्दर संयोजन द्वारा ही सभी प्रकार के भावों की अभिव्यक्ति में सक्षम है। ध्वनि जब स्थिर नियमित स्पष्ट, मधुर एवं संगीतोपयोगी हो जाती है तब वह स्वर में परिणित हो जाती है। स्वर के शुद्ध तथा विक्रत दोनों ही रूप संगीत में सौन्दर्याभिव्यक्ति में सहायक होते हैं। राग भारतीय संगीत की अनुपम निधि है। राग स्वर वर्ण से अलंकृत विशिष्ट स्वरावली है जो रंज्जक तथा आनंदप्रद है। राग में सौन्दर्य के अनंत रहस्य निहित है। एक राग अनेक बार सुनने पर भी सुन्दर एवं मनोहारी प्रतीत होता है। राग भारतीय संगीतज्ञों की सुविकसित, परिष्कृत, सूक्ष्म सौन्दर्यभावना का प्रतीक है। राग का स्वर वर्ण से विभूषित 'ध्वनिविशेषस्तु' अंग उसके रूप सौंदर्य से संबंधित है तो उसका 'रंज्जकत्व' तत्त्व अंतःसौन्दर्य से संबंधित है। राग के विस्तार में स्वरों के विविध लगाव, आलाप तान, वादी, संवादी, विवादी स्वरों का उचित संयोजन, कण, मुर्की, मीड, खटका, गमक आदि अलंकरणों का प्रयोग, राग भाव के अनुसार ताल का सही निर्धारण तथा उचित लयों का प्रयोग उसके सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होते है। इस प्रकार संगीत कला एवं सौन्दर्यानुभूति में डॉ. किरन शर्मा ने कहा है कि लहरियों की अविरलता तथा स्वर, ताल, लय का अपूर्व संयोजन ही संगीत का सौन्दर्य आदर्श है जो सुनने वाले को विशिष्ट आनंदानुभूति कराता है, यही सौन्दर्यानुभूति है। कलाकार द्वारा जब किसी राग की अवतारणा की जाती है तो कलाकार, कलाकृति एवं श्रोता इन तीनों के बीच एक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। गायक अथवा वादक अपनी कल्पना के सहारे रचना को सुन्दर स्वर लहरियों से सवारता है तथा विस्तारित करता जाता हैं तथा श्रोता अपनी मनः स्थिति के अनुसार उसका रसास्वादन करता जाता है। कलाकार की भावाभिव्यक्ति तथा श्रोता की भावानुभूति की इस प्रक्रिया के बीच में 'सौन्दर्य' अपना स्थान बना लेता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि कलाकार के अन्तर्मन में स्थित सौन्दर्य की कल्पना का बाह्य सौन्दर्य के साथ सामंजस्य, निर्मित कलाकृति में उस सौन्दर्य का आर्विभाव तथा श्रोता के मन में सौन्दर्य का अनुभव इन तीनों (कलाकार, कलाकृति तथा सहृदय) के समन्वित रूप में ही सौंदर्य निहित है। कलाकार अपनी कलाकृति द्वारा आनंद एवं वेदना दोनों प्रकार के भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है। कोई श्रृंगारिक अथवा

शांत रस से परिपूर्ण रचना यदि श्रोता के मन को आनंदित करती है उतना ही आनंद कोई विरह गीत या करूण रस से परिपूर्ण रचना भी प्रदान कर सकती है। उचित स्वर सन्निवेश भावों के अनुसार काकु प्रयोग श्रोता के चित्त को आह्लादित करने की क्षमता तथा कल्पना का प्रयोग किसी भी रचना को हृदयग्राही बना सकता है। संगीत रचना के बाह्य तथा आंतरिक दोनों स्वरूपों को उभारना व श्रोताओं को स्वर लहरियों के सागर में विहार कराना ही यदि कलाकार का लक्ष्य हो, और वह इसमें सफल हो तभी सौंदर्यशास्त्र की दृष्टि से वह उत्कृष्ट कला कही जा सकती है। वाद्य संगीत पदविहीन होने के उपरांत भी स्वरों के सुनियोजित एवं सुन्दर संयोजन के कारण आनंदानुभूति के एक विशिष्ट वातावरण का निर्माण कर देता है। श्रोतागण तन्मय होकर उस वातावरण में विशेष सौन्दर्यात्मक तत्त्वों के निहित होने के कारण उसका रसास्वादन करने को बाध्य हो जाता है। यही सौन्दर्यात्मक तत्त्व कला को 'सत्य' ब्रह्म या मोक्ष प्राप्ति की ओर ले जाते हैं। श्रोताओं की तन्मयता ही इस बात की द्योतक होती है कि उस समय श्रोता अचेतन होते भी चेतन तथा निष्क्रिय होते भी सक्रिय रहता है। श्रोताओं को आनन्द के चरमोत्कर्ष तक ले जाने वाला यही भाव सौन्दर्य के शास्त्रीय लक्षणों से युक्त माना जा सकता है। इन लक्षणो के अन्तर्गत, सम्मात्रा (Symmetry), संगति (Harmony), संतुलन (Balance), सुव्यवस्था (Order), विविधता (Variety), औचित्य (Propriety), स्पष्टता (Clearity) सौम्यता (Simplicity) आदि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। संगीत कला में सौन्दर्य के शास्त्रीय नियमों एवं लक्षणों के पालन से, सौन्दर्य उपादानों के समुचित प्रयोग से, कलाकार की सुन्दर एवं सफल अभिव्यक्ति से अनुकूल वातावरण में, श्रोता के सहृदय एवं ग्रहणशील होने पर संगीत कलाकृति से जो विलक्षण आनंद की अनुभूति होती है वही सौन्दर्यानुभूति है। संगीत कला से प्राप्त आनंद मूलतः विशुद्ध ही होता है।

अभ्यास प्रश्न– इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं दे।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY